Chapter. 4

अध्याय : 4

व्यंग्योत्मक उपन्यासों की चरित्र-सृष्टि

अध्याय : 4

व्यंग्यात्मक उपन्यासों की चरित्र - सृष्टि

उपन्यास मानव-चरित्र का चित्र है । उसकी यथार्थता एवं सार्थकता इस बात पर निर्भर है कि उपन्यासकार कितने सशक्त एवं सप्राण चरित्रों को उनके सही रूप में अंकित कर पाता है । शिक्षा, नये विचार, नयी व्यवस्था, औद्योगिक विस्तार एवं नवीन सामाजिक - राजनीतिक परिवर्तन आदि के कारण मनुष्य का जीवन अब जटिल होता जा रहा है । इस जटिलता के साथ विषमता, विसंवादिता जैसे तत्व भी बढ़ रहे हैं जिससे निरंतर व्यंग्यात्मक स्थितियाँ आकार ले रही हैं । इन व्यंग्यात्मक स्थितियों का निरूपण पहले उपन्यासों में यदा-कदा होता रहता था, किन्तु अब समूचा परिवेश इतना व्यंग्यात्मक होता जा रहा है कि पिछले कुछ दशकों में ऐसी औपन्यासिक रचनाएं सामने आयीं जिनका रूपबन्ध सम्पूर्णतया व्यंग्यात्मक है, यथा "राग दरबारी", "कथा-सूर्य की नयी यात्रा", "कुरु कुरु स्वाहा", "सबहि नचावत राम गोसाई", "दिल एक सादा कागज", "एक चूहे की मौत", "नेताजी कहिन" आदि ।

इन उपन्यासों की चरित्र-सृष्टि भी अपनी व्यक्तिगत, सामाजिक एवं मानवीय विशेषताओं से मंडित है, किन्तु यहाँ एक विशिष्ट प्रकार के औपन्यासिक रूपबन्ध के आग्रह के कारण चरित्रांकन में व्यंगात्मक रेखाओं की

प्रचुरता कुछ अधिक बढ़ी-चढ़ी मिलती है । अत: चरित्रों के बाह्य एवं आंतरिक निरूपण में भी यही व्यंग्यात्मकता का पुट अधिकांशत: उपलब्ध होता है । व्यंग्यात्मक उपन्यासों की चरित्र-सृष्टि के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि प्रत्येक पात्र निम्नलिखित दो विशेषताओं से निर्मित होता है :-

(1) व्यक्तिगत विशेषता और

(2) सामाजिक या जातिगत विशेषता ।

(1) व्यक्तिगत विशेषता :

व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण ही पात्र में वैशिष्ट्य एवं सप्राणता आती है । संसार में कोई भी दो व्यक्ति नितान्त एक-से नहीं होते क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ निजी विशेषताएँ होती हैं जो उसे अन्यों से अलग करती हैं । इन वैयक्तिक निजी विशेषताओं का निरूपण भी दो प्रकार से होता है -- बाह्य एवं आंतरिक । बाह्य विशेषताओं के निरूपण से बाहरी व्यक्तित्व (बाहरी आपा) का निर्माण होता है और आंतरिक या भीतरी विशेषताओं से भीतरी व्यक्तित्व (भीतरी आपा) का निर्माण होता है । बाह्य विशेषताओं में व्यक्ति का आकार, रूप, बोली, चाल-ढाल, तकिया-कलाम आदि को लिया जाता है तो आंतरिक विशेषताओं में उसके विशिष्ट गुणों को लिया जाता है, किन्तु यहाँ इस बात का स्मरण रहे कि व्यंग्यात्मक उपन्यासों की चरित्र-सृष्टि में अधिकांशत: उपनिर्दिष्ट दोनों विशेषताएँ व्यंग्यात्मकता लिए हुए रहती हैं ।

बाहय - विशेषताओं का निरूपण :-

"राग दरबारी" का रंगनाथ एक आधुनिक बिगडें हुए स्वास्थ्यवाला नवयुवक छात्र है। शहर से शिवपाल गंज वह तन्दुरस्ती बनाने के लिए आया है क्योंकि लेखक के ही शब्दों में "एम॰ए॰ करते - करते वह किसी भी सामान्य विद्यार्थी की तरह कमजोर पड़ गया था। उसे बुखार रहने लगा था। किसी भी सामान्य हिन्दुस्तानी की तरह उसने डाक्टरी चिकित्सा में विश्वास न रहते हुए भी डॉक्टरी दवा खायी थी। उससे वह बिलकुल ठीक नहीं हो पाया था। किसी भी सामान्य शहराती की तरह उसकी भी आस्था थी कि शहर की दवा और देहात की हवा बराबर होती है। इसलिए वह यहाँ रहने के लिए चला आया था। किसी भी सामान्य मूर्ख की तरह उसने एम॰ए॰ करने के बाद तत्काल नौकरी न मिलने के कारण, रिसर्च शुरू कर दी थी, पर किसी भी सामान्य बुद्धिमान की तरह वह जानता था कि रिसर्च करने के लिए विश्वविद्यालय में रहना और नित्य प्रति पुस्तकालय में बैठना ज़रूरी नहीं है। इसलिए उसने सोचा था कि कुछ दिन गाँव में रहकर आराम करेगा, तन्दुरस्ती बनायेगा।"[1]

उपन्यास के प्रारंभ में ही उसके बाहरी व्यक्तित्व का व्यंगात्मक चित्र अंकित हुआ है : "अहा ! क्या हुलिया था ! नवकुंज लोचन कंजमुख करकुंज पद कुंजारुणम्। पैर खद्दर के पैजाम में, सर खद्दर की टोपी में, बदन खद्दर के कुर्ते में। कन्धे से लटकता हुआ भूदानी झोला। हाथ में चमड़े की अटैची।"[2] इस व्यंगात्मक हुलिये के वर्णन में चेहरे के पिलपिलेपन को व्यंजित करने के लिए विरोध के आधार पर "मानस" की पंक्तियों को लिया

गया है । दूसरे वाक्य रंगनाथ की शारीरिक कृशता को व्यंजित करते हैं । भूदानी झोला और चमड़े की अटैची उसके बुद्धिजीवी स्वांग को उभारती हैं ।

रूप्पन बाबू छंगामल इण्टरमिजीएट कालेज के सीनियर छात्र, वैद्यजी के सुपुत्र एवं स्थानीय नेता हैं । "उनका व्यक्तित्व इस आरोप को काट देता था कि इण्डिया में नेता होने के पहले धूप में बाल सफेद करने पड़ते हैं । उनके नेता होने का सब से बड़ा आधार यह था कि वे सबको एक निगाह से देखते थे । थाने में दारोगा और हवालात में बैठा हुआ चोर - दोनों उनकी निगाह में एक थे । उसी तरह इम्तहान में नकल करनेवाला विद्यार्थी और कालेज के प्रिंसिपल उनकी निगाह में एक थे । वे सबको दयनीय समझते थे, सबका काम करते थे, सबसे काम लेते थे । उनकी इतनी इज्ज़त थी कि पूंजीवाद के प्रतीक दूकानदार उनके हाथ सामान बेचते नहीं, अर्पित करते थे और शोषण के प्रतीक इक्केवाले उन्हें शहर तक पहुँचाकर किराया नहीं, आशीर्वाद माँगते थे । उनकी नेतागिरी का प्रारंभिक और अंतिम क्षेत्र वहाँ का कॉलेज था, जहाँ उनका इशारा पाकर सैकड़ों विद्यार्थी तिल का ताड़ बना सकते थे और जरूरत पड़े तो उस पर चढ़ भी सकते थे ।"[3] इस रूप्पनबाबू के बाहरी व्यक्तित्व का चित्रण लेखक ने इस प्रकार दिया है -- "वे दुबले-पतले थे, पर लोग उनके मुँह नहीं लगते थे । वे लम्बी गरदन, लम्बे हाथ और लम्बे पैर वाले आदमी थे । जननायकों के लिए ऊल-जलूल और नये ढंग की पोशाक अनिवार्य समझकर वे सफेद धोती और रंगीन बुश्शर्ट पहनते थे और गले में रेशम का रूमाल लपेटते

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
HANSA MEH

थे । धोती का कोना उनके कंधे पर पड़ा रहता था । वैसे देखने में उनकी शक्ल एक घबराये हुए मरियल बछड़े की सी थी, पर उनका रौब पिछले पैरों पर खड़े हुए एक हिनहिनाते घोड़े का-सा पड़ता था ।"[4] तथा "रंगनाथ ने अब उन्हें (रूप्पन बाबूको) ध्यान से देखा । कन्धे पर टिकी हुई धोती का छोर, ताज़ा खाया हुआ पान, बालों में पड़ा हुआ कई लिटर तेल -- स्थानीय गुण्डागीरी के किसी भी स्टेण्डर्ड से वे होनहार लग रहे थे ।"[5]

इस उपन्यास के बाबू मंगलदास याने सनीचर वैद्यजी के दरबार का एक रत्न है । उसका काम दरबार में बैठना, वैद्यजी की कृपा से अल-जलूल बातें करना और वैद्यजी के लिए भाँग घोंटना है । उसके बाहरी व्यक्तित्व की खाका लेखक ने इस प्रकार खींचा है -- "एक दुबला-पतला आदमी गन्दी बनियाइन और धारीदार अण्डरवियर पहने बैठा था । नवम्बर का महीना था और काफी ठण्डक हो चली थी पर वह बनियाइन में काफ़ी खुश नज़र आ रहा था । उसका नाम मंगल था, पर लोग उसे सनीचर कहते थे । उसके बाल पकने लगे थे और आगे के दाँत गिर गए थे । उसका पेशा वैद्यजी की बैठक पर बैठे रहना था । वह ज्यादातर अण्डरवियर ही पहनता था । उसे आज बनियाइन पहने हुए देख रूप्पनबाबू समझ गये कि सनीचर "फार्मल" होना चाहता है । उसने रूप्पनबाबू को एक सांस में रंगनाथ की मुसीबत बता दी और अपनी नंगी जाँघो पर तबले के कुछ मुश्किल बोल निकालते हुए ललककर कहा, "बद्री भैया होते तो मज़ा आता ।"[6]

बाहय व्यक्तित्व के चित्रण में आकार, रूप, पहिनावा, चाल-ढाल के अतिरिक्त बोली, भाषा, तकिया-कलाम आदि को भी लिया जाता है ।

"राग दरबारी" के प्रिसिंपल साहब भावावेश में आकर खड़ी बोली से सीधे ठेठ अवधी पर उतर आते हैं, यथा -- "मैं सब समझता हूँ । तुम भी खन्ना की तरह बहस करने लगे हो । मैं सातवें और नवें का फर्क समझता हूँ । हमका अब प्रिसिंपली करै न सिखाव भैया । जौनु हुकुम है, तौनु चुप्पे कैरी आउट करौ । समझ्यौ कि ना हीं "[7]

इनके बाह्य रंग-ढंग का भी बड़ा रोचक वर्णन लेखक ने किया है, यथा -- "दुबला - पतला जिस्म; उसके कुछ अंश खाकी हाफ पैंट और कमीज़ से ढके थे । पुलिस सार्जेन्टों वाला बेंत बगल में दबा हुआ । पैर में सैंडिल । कुल मिलाकर काफ़ी चुस्त और चालाक दिखते हुए; और जितने थे उससे ज्यादा अपने को चुस्त और चालाक समझते हुए ।"[8]

"नेताजी कहिन" के नेताजी जब-तब बैसवाडी बोली का प्रयोग करते हैं । ग्रामीण राजनीति पर छाए हुए नेताओं की व्यंग्यात्मक मुद्रा उभारने के लिए यह बोली यहाँ काफ़ी हद तक उपयोगी सिद्ध हुई है । उपन्यास का एक पात्र नेताजी को उनकी विदेश-यात्रा के सम्बन्ध में पूछता है --

"अब कहाँ जा रहे हो ?"

"दो चक्कर चला रखे हैं । एक तो मनीला में गोबर गैस सम्मेलन हय ससुर । दूसरा मारशस की सद्भाउ जात्रा का सिलसिला हय । कहीं तो जुगाड बइठेगा ।"

"इतनी विदेश यात्राएं कैसे कर लेते हो ? "

"अरे सही बताते हैं आप से हम, चाहें तो महीना में पचीस दिन फोरेन रहें ससुरा बाकी हमको उतना सउक हय नहीं । बीच - बीच में जाते हैं बिजनस - कम - प्लइजर - जियादा के लिए । फिरी फण्ड में जाने के हज़ार

रास्ते हैं ससुर । अरे हम - आप जइसे फिरी फण्ड चलने के लिए आगे नहीं आयेंगे तो क्या सरकारें हवाई जहाज अउर रेलगाड़ियों के फस्स कलास इयरकंडीशन आधे खाली ही भेजती रहेंगी ।"[9] "ससुर" नेताजी का तकिया-कलाम है और खड़ी बोली - बैसवाड़ी मिश्रित भाषा में अंग्रेजी शब्दों को ठेठ हिन्दी में फेंटकर ऐसे बोलते हैं कि यह भाषाई बलात्कार एक व्यंग्यात्मक परिमाण में बदल जाता है ।

"कुरु कुरु स्वाहा" के मित्रवर अपनी शुद्ध संस्कृत-मिश्रित हिन्दी के कारण एक अलग पहचान बना लेते हैं, यथा -- "आयुष्यमान क्लीव आजकल अज्ञातवास कर रहे हैं । उस यशस्वी कवि को ईश-कृपा से गुर्जर-सुन्दरी विशेष का वरदहस्त तो इस वर्ष से ही प्राप्त था, गत माह से लक्ष्मणपुर की एक स्वर-साधिका भी उनके कर्ण में प्रीति-मंत्र फूंकने लगी है । इन दो आर्य पुत्रियों के मध्य वह नर-पुंगव किस स्थान विशेष में विलीन हो गया है, इसकी किसी को कोई सूचना नहीं । अनुमान तथापि सम्भव है ।"[10]

इस उपन्यास के नायक मि॰ जोशी के दो साझेदार मि॰ तिरखा और मि॰ तलाटी क्रमशः पंजाबी और गुजराती बुज़ुर्ग हैं । दोनों बुज़ुर्ग कमरे में नेशनल ड्रेस याने "कच्छा-बनियान" में ही रहते थे । हर नयी बात इनके लिए बहुत पुरानी थी, यथा -- "जरमन हर बात अपन से सीखा । नवा कोच्छ नहीं सब जूना ।"[11] उनकी भाषा भी क्रमशः गुजराती-मराठी और पंजाबी पुट लिए हुए बम्बइया प्रकार की है । दोनों के एक-एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है :-

:1: "आर्टिस्ट मीन्स आधा-पौना-एइसा सन्त फकीर । पन अनुशासन के बिगैर आर्ट कइसा हो सकेगा, ये भी सोचना मिस्टर जोशी ।"[12]

:2: होता है जरूरी, दिस इल्यूजन अॉफ न्यू, वो तो मैच्योरिटी में समझ आनेवाली गल्लाँ है कि दियर इज नथिंग न्यू, नथिंग ओल्ड, दियर इज समथिंग एवर न्यू । लेकिन अभी तो यंगमैन है मिस्टर जोशी । इसने कहना ही हुआ कि चाचाजी मैं नवीं चीज लाया हूँ । यही होता है ओस माया तेरी का प्रभाव ।"[13]

उपर्युक्त उदाहरणों में जहाँ भाषागत विशेषता पात्रों के बाहय व्यक्तित्व को निरूपित करती है, वहाँ उसमें व्यक्त विचार उनके आंतरिक चरित्र को भी उजागर करते हैं ।

आंतरिक विशेषताओं का निरूपण :-

आंतरिक विशेषता के अंतर्गत पात्र-विशेष के विशिष्ट गुणों को लिया जाता है । उपरि निर्दिष्ट उदाहरणों में रंगनाथ और रूप्पनबाबू की बाहय विशेषताओं को निरूपित करने से पूर्व जो उनका यत्किंचित परिचय दिया गया है उसमें तथा भाषा या बोलीगत उदाहरणों में व्यक्त भाव या विचार पात्रों के आंतरिक मनोभावों को प्रगट करते हैं ।

"राग दरबारी" के एक पात्र बेइमान मुन्नू के बारे में लेखक ब्यौरा देते हैं :- "बेईमान मुन्नू बड़े ही बाइज़्ज़त आदमी थे । अंग्रेजी में, जिनके गुलाबों में शायद ही कोई खुशबू हो, एक कहावत है, गुलाब को किसी भी नामसे पुकारो, वह वैसा ही खुशबूदार बना रहेगा । वैसे ही उन्हें किसी भी नाम से क्यों न पुकारा जाय, बेईमान मुन्नू उसी तरह इत्मीनान से

आटाचक्की चलाते थे, पैसा कमाते थे, बाइज़्ज़त आदमी थे। वैसे बेईमान मुन्नू ने यह नाम खुद नहीं कमाया था। यह उन्हें विरासत में मिला था। बचपन में उनके बापू उन्हें प्यार के मारे बेईमान कहते थे, माँ उन्हें प्यार के मारे मुन्नू कहती थी। पूरा गाँव अब उन्हें प्यार के मारे बेईमान मुन्नू कहता था। वे इस नाम को उसी सरलता से स्वीकार कर चुके थे, जैसे हमने जे॰ बी॰ कृपलानी के लिए आचार्यजी, जे॰ एल॰ नेहरू के लिए पण्डितजी या एम॰के॰ गाँधी के लिए महात्माजी को बतौर नाम स्वीकार कर लिया है।"[14]

उपर्युक्त अवतरण में बेईमान मुन्नू का सारा कांइयाँपन, हरामीपन, दुष्टता आदि को लेखक ने बड़े व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत कर दिया है।

इसी उपन्यास में एक मास्टर मोतीराम हैं जो आपात धनत्व के सिद्धान्त को भी आटाचक्की के माध्यम से सिखाते हैं। विषय कोई भी हो, आटाचक्की का जिक्र उसमें अवश्य आता था। कालेज में पढ़ाते-पढ़ाते कभी वे अपने खेतों व आटाचक्की की तरह निकल जाते थे। प्रिंसिपल भी उन्हें कुछ नहीं कह सकते थे क्योंकि वे शिवपालगंज के सर्वेसर्वा वैद्यजी के आदमी थे। उन्हीं मास्टर मोतीराम के सम्बन्ध में रूप्पन की यह टिप्पणी बड़ी ही व्यंग्यात्मक बन पड़ी है -- "तुमने मास्टर मोतीराम को देखा है कि नहीं? पुराने आदमी हैं। दरोगाजी उनकी बड़ी इज़्ज़त करते हैं। वे दरोगाजी की इज़्ज़त करते हैं। दोनों की इज़्ज़त प्रिंसिपल साहब करते हैं। कोई साला काम तो करता नहीं है, सब एक दूसरे की इज़्ज़त करते हैं।"[15]

उक्त उदाहरण से मास्टर मोतीराम के चरित्र पर तो प्रकाश पड़ता ही है, रूप्पन का चरित्र भी उससे उजागर होता है । उपर्युक्त कतिपय उदाहरणों में चरित्र की व्यक्तिगत विशेषताओं को निर्दिष्ट किया गया है, किन्तु इन वैयक्तिक विशेषताओं के अतिरिक्त कुछ सामाजिक या जातिगत विशेषताएँ भी चरित्रों में परिलक्षित होती हैं ।

§2§ सामाजिक या जातिगत विशेषता :

व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण जहाँ चरित्रों में वैशिष्ट्य एवं सप्राणता आती है, वहाँ सामाजिक एवं जातिगत विशेषताओं के कारण पात्र अधिक विश्वसनीय § Probable § बनते हैं । शिक्षा , परिवेश नवीन परिस्थितियाँ इत्यादि के कारण पात्र में व्यक्तिगत विशेषताएँ प्रस्फुटित होती हैं, किन्तु वह जिस समाज, वर्ग समुदाय या जाति का होता है उसकी भी कुछ विशेषताएँ अप्रत्याशित रूप से उसमें संक्रमित हो जाती हैं ।

स्वाधीनता के बाद हमारे ग्रामीण परिवेश में जिन भ्रष्ट, सिद्धान्तहीन सत्ता और धन संपन्न "मुँह में राम बगल में छूरी" वाले अवसरवादी § Shrewd § नेताओं का चरित्र उभरा है, उनका प्रतिनिधित्व करते हैं, "राग दरबारी" के वैद्यजी । अंग्रेजो के जमाने में अंग्रेजो के पिट्ठू थे, अब पक्के काँग्रेसी हो गये । इनके इस चरित्र का बड़ा ही व्यंग्यात्मक चित्र लेखक ने उपस्थित किया है :-

"वैद्यजी थे, हैं और रहेगें । अंग्रेजों के जमाने में वे अंग्रेजों के लिए श्रद्धा दिखाते थे । देसी हुकूमत के दिनों में वे देसी हाकिमों के लिए श्रद्धा दिखाने लगे । वे देश के पुराने सेवक थे । पिछले महायुद्ध के दिनों में, जब

देश को जापान से ख़तरा पैदा हो गया था, उन्होंने सुदूर-पूर्व में लड़ने के लिए बहुत से सिपाही भरती कराये। अब ज़रूरत पड़ने पर रातोंरात वे अपने राजनीतिक गुट में सैकड़ों सदस्य भरती करा देते थे। पहले भी वे जनता की सेवा जज की इजलास में जूरी और असेसर बनकर, दीवानी के मुक़दमों में जायदादों के सिपुर्ददार होकर और गाँव के जमींदारों में लम्बरदार के रूप में करते थे। अब वे कोआपरेटिव यूनियन के मैनेजिंग डाइरेक्टर और कालिज के मैनेजर थे। वास्तव में वे इन पदों पर काम नहीं करना चाहते थे क्योंकि उन्हें पदों का लालच न था। पर उस क्षेत्र में ज़िम्मेदारी के इन कामों को निभानेवाला कोई आदमी ही न था और वहाँ जितने नवयुवक थे, वे पूरे देश के नवयुवकों की तरह निकम्मे थे, इसीलिए उन्हें बुढ़ापे में इन पदों को सँभालना पड़ा था। बुढ़ापा! वैद्यजी के लिए इस शब्द का इस्तेमाल तो सिर्फ़ अरिथमेटिक की मजबूरी के कारण करना पड़ा था, क्योंकि गिनती में उनकी उमर बासठ साल हो गयी थी। पर राजधानियों में रह कर देश सेवा करनेवाले सैंकडों महापुरुषों की तरह वे भी उमर के बावजूद बूढ़े नहीं हुए थे और उन्हीं महापुरुषों की तरह वैद्यजी की यह प्रतिज्ञा थी कि हम बूढ़े तभी होंगे जब कि मर जायेंगे और जब तक लोग हमें यकीन न दिला देंगे कि तुम मर गये हो तब तक अपने को जीवित ही समझेंगे और देश सेवा करते रहेंगे। हर बड़े राजनीतिज्ञ की तरह वे राजनीति से नफ़रत करते थे और राजनीतिज्ञों का मज़ाक उड़ाते थे। गाँधी की तरह अपनी राजनीतिक पार्टी में उन्होंने कोई पद नहीं लिया था, क्योंकि वे वहाँ नये ख़ून को प्रोत्साहित करना चाहते थे; पर को-ओपरेटिव और कालिज के मामलों में लोगों ने उन्हे मज़बूर कर दिया था और उन्होंने

मजबूर होना स्वीकार कर लिया था ।"[16]

यहाँ एक सीधे सपाट किन्तु प्रभावशाली ढंग से व्यंग्य का उपयोग लेखक ने किया है । इसमें हमारे अवसरवादी, सत्तालोलुप, चैर-चिपकू नेताओं की स्वार्थान्धता का बड़ा ही व्यंग्यात्मक चित्र उपलब्ध होता है । वैद्यजी शिवपालगंज के नेता हैं, किन्तु यह समूचा देश ही शिवपालगंज है और ऐसे वैद्यजी हर जगह मौजूद हैं ।

"सबहि नचावत राम गोसाईं" के उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री त्यागमूर्ति झम्मनलाल इक्यासी वर्ष की अवस्था में भी समस्त प्रदेश का भार अपने कंधों पर उठाए हुए हैं । उनकी जर्मनी में बनी हुई बत्तीसी को देखकर कोई अन्दाज़ा नहीं लगा सकता था कि वह नकली होगी । दोनों कानों में लगे हुए बटनों से वह गरीबों का सुख-दुःख आसानी से सुन सकते थे । वैसे वे अपना शासन दामाद मंगतराम और गृहमंत्री जबरसिंह के सहारे चलाते थे । दो परस्पर विरोधी बातों को सैद्धान्तिक तरीके से कैसे कहा जा सकता है उसका नमूना हमें उनके निम्नलिखित कथनों से मिलता है ।

जबरसिंह के उद्योगपति मित्र राधेश्याम लखनऊ के पास विदेशी सहायता से ट्रेक्टर की फैक्टरी लगवाना चाहते हैं । योजना यह है कि एक करोड़ के शेयर उत्तर प्रदेश सरकार ले ले और कम दामों में किसानों की जमीन एकवायर करके फैक्टरी के लिए दे दी जाय । इस सम्बन्ध में बात करने के लिए जबरसिंह और राधेश्याम त्यागमूर्ति झम्मनलाल सत्याग्रही को मिलते हैं तब महात्मा गांधी और सर्वोदय की बात का हवाला देते हुए वे कहते हैं --

"सारे संसार का विनाश होनेवाला है । इसी विज्ञान के कारण समस्त विश्व में बेकारी बढ़ रही है । मैं गलत नहीं कहता, अब तुम अपने इन ट्रेक्टरों को लो, एक ट्रेक्टर चार-पाँच सौ एकड़ जमीन जोत देगा, और उस ट्रेक्टर को चलाने के लिए एक या अधिक से अधिक दो आदमी चाहिए । xxx और एक हल से दस बारह एकड़ जमीन से अधिक नहीं जोती जा सकती । तो चार सौ एकड़ जमीन जोतने के लिए कम-से-कम तीस हल चाहिए । साठ बैल चाहिए । तो इन तीस हलों पर ज़रूरत पड़ेगी तीस आदमियों की । xxx तो फिर साठ बैलों की गोबर की खाद, मर गये तो उनका चमड़ा । तो हमारे देशमें इन बैलों के द्वारा खाद की समस्या हल हो सकती है - बशर्ते लोग गोबर के कण्डा पाथकर उसे न जलावें । फिर विदेशों में भारतवर्ष के जूतों की कितनी अधिक माँग है, अगर पशुधन की उपेक्षा हुई तो हमारे देश में चमड़े का व्यापार चौपट । इसी पशुधन से दूध - घी - मक्खन ! तो इससे देश के हरेक आदमी को काम मिलेगा । मैं तो महात्मा गांधी का अनुयायी हूँ । जिन्दगीभर मैं ने सर्वोदय का काम किया है !"[17]

इस पर गृहमंत्री जबरसिंह बिफरकर कहते हैं -- "तो त्यागमूर्तिजी, मैं कल असेम्बली में आपकी नीतियों की घोषणा कर दूँ । लोग आपको प्रतिक्रियावादी और दकियानूसी कहकर हटाना चाहते हैं, आपकी न जानें कितनी शिकायतें दिल्ली में प्रधानमंत्री के यहाँ पहुँची हैं, वह तो मैं ही आपको बचाये हुए हूँ ।"[18]

जबरसिंह की इस धमकी से गिरगिट की तरह रंग बदलते हुए त्यागमूर्तिजी तत्काल उद्योग-धन्धों से होनेवाले लाभों की बात करने लगते हैं --

"खैर छोड़ो भी यह सब ! तो बात इतनी है कि यह सेठ राधेश्याम यहाँ लखनऊ में ट्रैक्टरों का कारखाना खोलना चाहते हैं, xxx इन ट्रैक्टरों से अनाज की उपज बढ़ेगी - यह ट्रैक्टर हिन्दुस्तान भर में बिकेंगे, इस ट्रैक्टर फैक्टरी में सैकड़ों - हजारों आदमी काम पायेंगे - तो यह ट्रैक्टर फैक्टरी खुलनी चाहिए । हमारी सरकार एक करोड़ के शेयर ले लेगी ।"

त्यागमूर्ति झम्मनलालजी के उपर्युक्त दोनों कथन कुछ ही क्षणों के अन्तकाल में कहे गए हैं । इनसे उनका द्विमुखी व्यक्तित्व झलकता है । खूबी तो यह है कि दोनों बातों का प्रतिपादन वे सैद्धान्तिक द्रष्टि से करते हैं । सिद्धान्तों की खोल को ओढ़कर सिद्धान्तों से मुड़ना इसीको कहते हैं ।[19]

"जुलूस" (फणीश्वरनाथ रेणु) का तालेवर गोढ़ी अपनी काम-वासना की पूर्ति के लिए तांत्रिक-विद्या का सहारा लेता है । उसके अनुसार तंत्र-साधना के लिए औरत का होना बहुत जरूरी है । इन कामों के लिए वह उपन्यास के एक अन्य पात्र जयरामसिंघ को बुलाता रहता है । जयरामसिंघ की छोटी-मोटी इच्छाओं की पूर्ति तालेवर गोढ़ी द्वारा हो जाती है और बदले में वह सवर्ण लड़कियों को फँसाकर तालेवर गोढ़ी के पास भेज देता है । एक बार तलवार लेने का शौक हुआ तो पोखरवाले "कामतघर" में "डायन का मंत्र" सिखाने के लिए बमन टोली से एक तेल बाभिन लड़की को वह तालेवर गोढ़ी के लिए आया था । दूसरी बार हारमोनियम के लिए गोप टोली का "माल" उसने पहुँचाया था । एक स्थान पर वह जयरामसिंघ से कहता है --

"बात यह है जयराम कि तुमसे क्या छिपाना ? इस बार "हरदुआर" जी में हम एक साधू बाबा के पास जाकर बैठे । हाथ की रेखा देखकर साधू बाबा ने बहुत कुछ कहा । जब मैं ने पूछा कि बाबा यह संसार का माया-मोह कब कटेगा तो बोले -- बच्चा ! अभी हड़बड़ाता क्यों है ? अभी तो एक एड़ी तक केशवाली का तलवा सहलाना बाकी है ।"[20]

इसी प्रकार "कुरु कुरु स्वाहा" के मि॰ तलाटी और मि॰ तिरखा; "कथा सूर्य की नयी यात्रा" में निरूपित हिन्दी साहित्य के प्रखर विद्वान; "राग दरबारी" के प्रिंसिपल साहब, गयाप्रसाद और रामाधीन भिखमखेड़वी; "सबहिं नचावत राम गोसाईं" के मैवालाल, राधेश्याम, जबरसिंह; "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" की नर्मदाबेन सेठानी, "दिल एक सादा कागज" के ठाकुर साहब प्रभृति पात्र अपनी जातिगत या सामाजिक विशेषताओं व विसंगतियों के कारण व्यंग्यात्मकता की मुद्रा को उपस्थित करते है । कथन-कवन की द्विमुखता, अवसरवादिता, स्वार्थन्धता, आधुनिक परिवेश में नित्यप्रति बढ़ रही विलासवादिता प्रभृति कारणों से इधर के चरित्र कुछ अधिक ही व्यंग्यात्मक हो चले हैं ।

पात्रों का वर्गीकरण :-

व्यावहारिक जगत में दो व्यक्तियों का सूरत-सीरत सभी द्रष्टियों से एक-सा होना नितान्त असंभव है । प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में एक इकाई है, परन्तु उपन्यास में आनेवाले चरित्र, उपन्यासकार की रचना प्रक्रिया के कारण वर्ग-भेद की सृष्टि कर सकते हैं । उपन्यासों में मिलनेवाले नाना चरित्रों को आलोचकों ने §1§ वर्ग प्रधानचरित्र (Typical

character), §2§ व्यक्तिप्रधान चरित्र (Individual character), §3§ स्थिर चरित्र (Static character), §4§ गति-शील चरित्र (Kinetic character), §5§ द्विपरिमाण और त्रिपरिमाण वाले चरित्र (Flat character and Round character) §6§ प्रमुख एवं पार्श्वभौमिक पात्र; जैसे विविध प्रकारों में विभाजित किया है । उपन्यास का कोई भी रूपबन्ध हो, ये सब प्रकार तो मिलेंगे ही । फलत: व्यंग्यात्मक चरित्रों में भी ये सभी प्रकार मिलते हैं, किन्तु यहाँ व्यंग्यात्मकता का पुट कुछ अधिक परिमाण में उपलब्ध होता है । यह दृष्टिकोणकी भिन्नता एवं रचना-प्रक्रिया के कारण है ।

वर्ग-प्रधान चरित्र :-

वर्ग प्रधान चरित्र किसी वर्ग-विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं । पूर्व निर्दिष्ट विवेचन में सामाजिक या जातिगत विशेषताओं से मंडित वैद्यजी, त्यागमूर्ति झुम्मनलाल, जबरसिंह, राधेश्याम, तालेवर गोढ़ी, प्रभृति चरित्र वर्ग-प्रधान चरित्रों की कोटि में आते हैं । प्राय: जातिगत विशेषतावाले पात्र वर्गीकृत होते हैं । यद्यपि "राग दरबारी" के रंगनाथ में कुछ वैयक्तिक विशेषताएँ हैं, तथापि समग्रतया उसे वर्गीकृत चरित्र ही कहा जायेगा क्योंकि आधुनिक बुद्धिजीवी वर्ग का वह प्रतिनिधित्व करता है ।

"एक चूहे की मौत" में प्राय: सभी पात्र अनामी हैं । "क", "ख", "त", "प" आदि से काम चलाया गया है । उसमें सरकारी कार्यालयों में काम करनेवाले कर्मचारी वर्ग §मुंशीवर्ग - बाबूवर्ग§ को लिया गया है । एक प्रकार की Monotonus उबाऊ निरसतापूर्ण ज़िन्दगी जीते हुए वे अपना

अस्तित्व खो बैठे हैं । उनका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं, अपनी कोई पहचान नहीं । इसे व्यंजित करने के लिए ही "क", "ख", "ग" आदि नाम दिए गए हैं । अत: इस उपन्यास के सभी पात्रों में उस वर्ग की सर्व-सामान्य विशेषताएँ अपनी समग्र दुर्बलता-सबलता के साथ उपस्थित हुई हैं ।

:2: व्यक्ति-प्रधान चरित्र :-

इस प्रकार के चरित्र में व्यक्तिगत वैशिष्ट्य का परिमाण कुछ अधिक होता है । वस्तुत: पात्र व्यक्ति एवं समाज का मिला-जुला रूप होता है । वैयक्तिक वैशिष्ट्य से जहाँ पात्र में सप्राणता-जीवनता आती है, वहाँ उसका आधिक्य उसे असाधारण (abnormal) भी बना सकता है; अत: यदि उपन्यासकार का उद्देश्य ऐसे पात्र की सृष्टि करना न हो तो उसे कलागत संयम का निर्वाह करना चाहिए । क्योंकि पात्र वर्गमुक्त होने के कारण वास्तविक लगता है और व्यक्तित्वयुक्त होने के कारण विश्वसनीय ।[2]

"राग दरबारी" के रुप्पन; "सबहिं नचावत राम गोसाईं" के रामलोचन; "कुरु कुरु स्वाहा" के मि॰ जोशी तथा तारा झवेरी (पहुँचेली - लेखक के शब्दों में) "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई की केलेवाली गंगूबाई; एक चूहे की मौत" का चित्रकार आदि पात्र इस कोटि में आते है ।

:3: स्थिर - चरित्र :-

स्थिर-चरित्र के जीवन में वैचारिक आरोह-अवरोह नहीं आते । उपन्यास के प्रारंभ तथा अंत में उनकी स्थिति प्राय: एक-सी रहती है । "राग दरबारी" के वैद्यजी, रंगनाथ, बद्री पहलवान, रामाधीन भिखमखेड़वी आदि पात्र, "सबहि नचावत राम गोसाईं" के मेवालाल, त्यागमूर्ति

झुम्मनलाल सत्याग्रही; "नेताजी कहिन" में नेताजी के कक्का । "कुरु कुरु स्वाहा" के मि॰ तलाटी, मि॰ जोशी, मि॰ तिरखा आदि; "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" के सेठ (नर्मदाबेन के पति) प्रभृति पात्र स्थिर चरित्र हैं। स्थिर चरित्र का अर्थ यह नहीं कि उनके जीवन में कार्य-कलाप नहीं होते । समूचे उपन्यास में उनकी प्रकृति एक-सी ही रहती है । "राग दरबारी" का रंगनाथ प्रारंभ में भी निष्क्रिय बुद्धिजीवी, मिट्टी का शेर, अपने प्रति संदिग्ध, आत्मविश्वासहीन, पलायनवादी है और अंत तक उसका यही चरित्र रहता है । "जानामि धर्म न य मे प्रवृति, जानामि अधर्म न च मे निवृत्ति" वाली उसकी मन:स्थिति एक मानसिक नपुंसक उहापोह मात्र बनकर रह जाती है ।

:4: गतिशील चरित्र :-

गतिशील चरित्रों के जीवन में अनेक वैचारिक आरोह - अवरोह आते हैं । व्यक्तिप्रधान चरित्र प्राय: गतिशील होते हैं, किन्तु यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक व्यक्तिप्रधान चरित्र गतिशील ही हो । उसी प्रकार वर्ग-प्रधान चरित्र भी गतिशील हो सकता है । "कुरु कुरु स्वाहा" के मि॰ जोशी व्यक्ति-प्रधान चरित्र होते हुए स्थिर चरित्र की कोटि में आते हैं, जबकि "सबहि नचावत राम गोसाईं" के जबरसिंह, राधेश्याम आदि वर्ग-प्रधान चरित्र होते हुए" भी गतिशील हैं क्योंकि वे जिस वर्ग-विशेष से सम्बन्धित हैं उनमें परिवर्तन की गति बहुत ही क्षिप्र है । उपन्यास में इन गतिशील चरित्रों के कारण पाठकों की कुतूहल वृत्ति और जिज्ञासा पोषित होते हैं । इससे चरित्रों में जीवन्तता आती है और उपन्यास रोचक बन पड़ता है ।

:5: द्विपरिमाण और त्रिपरिमाण पात्र :-

ई० एम० फारस्टर ने अपने "आस्पेक्ट्स ओफ नावेल" मे स्वरूप की द्रष्टि से उपन्यास के पात्रों को द्विपरिमाण (Flat character) और "त्रिपरिमाण" (Round character) में विभाजित किया है । प्रथम प्रकार के पात्रों का सृजन किसी एक ही विचार, भावना या गुण – अवगुण के आधार पर होता है । इन पात्रों को पाठक तुरन्त पहचान लेता है, यथा "राग दरबारी" के वैद्यजी, "सबहि नचावत राम गोसाई" के राधेश्याम, "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" की सेठानी नर्मदाबेन आदि ऐसे ही पात्र हैं ।

जबकि त्रिपरिमाण पात्र का सृजन अनेक भावनाओं, विचारों या गुणों-अवगुणों के घात-प्रतिघातों से होता है । पात्र यदि सचमुच में त्रिपरिमाण होता है, तो उसमें पाठक को आश्चर्य चकित करने की अतुल शक्ति होती है । ऐसे पात्रों के सन्दर्भ में अनुमान नहीं लगायी जा सकता । "दिल एक सादा कागज" का रफफन और "सबहि नचावत राम गोसाई" का रामलोचन ऐसे ही पात्र हैं ।

"कुरु कुरु स्वाहा" का नायक मनोहर श्याम जोशी एक तिमंजिला नायक है । पहली मंजिल में बसा है "मनोहर" श्रद्धालु, भावुक किशोर । दूसरी मंजिल में "जोशीजी" नामक इण्टेलेक्चुअल और तीसरी में दुनियादार श्रद्धालु " मैं " जो इस कथा को सुना रहा है ।[22]

इस तिमंजिले पात्र की सृष्टि के लिए लेखक ने मनोविश्लेषणवादी पद्धति को अपनाया है, जिसमें पात्र की इन तीनों प्रवृत्तियों का चित्रण

लेखक अलग अलग ढंग से करता चला है । उपन्यास में एक स्थान पर "पहुँचेली" के आग्रह पर मनोहर "यं, रं, लं, वं," नामक एक पात्र के लिए सप्तशती का पाठ करता है । इसका एक व्यंग्यात्मक चित्र यहाँ द्रष्टव्य है --

"जोशीजी को बहुत आपत्ति होती है, ऐसे अतिसरलीकरण से । अपना यह कि न सरल के पुजारी हैं, न जटिल के आराधक । अपन तो कॉमनसेंस के कायल है साहब । अब मनोहर ने पढ़ी सप्तशती । देवी की तीन कहानियों का संग्रह । कहानियाँ यही कि देवता भी साहब होते हैं हमारे-आपके से ही हैं इस माने में कि लगाया किसी असुर ने मक्खन और उसे दे दिया वरदान कोई धाँसू टाइप का । असुर आदत से लाचार धड़ल्ले से पावर मिस्यूज करते हुए, समझे साहब, वरदान का दुरुपयोग करते हुए देवताओं को ही कष्ट में डाल देता है । तब देवता, शक्ति का आह्वान करते हैं जो कि होती उनके भीतर ही है । यह शक्ति, फिर साहब, छुट्टी करा देती है ससुरे असुरे की । इन कहानियों के आगे-पीछे बीच में कई स्तुतियाँ जुड़ी हुई है जो गीतात्मकता की द्रष्टि से जोशीजी को ठीक-ठाक-सी मालूम होती हैं । कहानियाँ तो खैर उनके अनुसार ऊल-जलूल हैं । जोशीजी, मनोहर को पूजा-पाठवाले इस पारिवारिक चक्कर में थोड़ा - बहुत पड़ने देते हैं तो दो कारणों से । पहला यह है कि इनमें वह "दा-दत्ता" टाइप का आयाम-वियाम मिल जाता है । दूसरा यह है कि एकाध ध्वस्त कर देनेवाला शब्द हाथ लग जाता है । मसलन, 'होता', समझे ना, कि अगले को देखनी पड़ जाय डिकशनरी कि

यह "होता" क्या होता है । "वृद्धश्रवा" पर बहुत दिनो से नजर है इनकी ।"[23]

यहाँ पात्रों के तीनों रूप – जोशीजी, मनोहर एवं "मैं" -- के लिए उनकी आंतरिक प्रवृत्तियों के अनुसार उनके अनुरूप भाषा का प्रयोग भी देखते बनता है । इसी सन्दर्भ में एक व्यंग्यात्मक कथन --

"मैंने कहा मनोहर से कि यार, शोर्टकट मार । ऐसे तो सारी रात लगवा देगा तू । आजकल तो जजमान खुद कहते हैं पण्डतों से कि ब्रेविटी इज़ द्य सोल ऑफ वर्शिप । तारीफ ही पण्डतों की इस बात के लिए होती है कि फटाफट करा देते हैं काम ।"[24]

:6: प्रमुख एवं पार्श्वभौमिक पात्र :-

उपन्यास में पात्रों के महत्त्व को लेकर प्रमुख एवं पार्श्वभौमिक पात्र जैसा वर्गीकरण भी किया गया है । प्रमुख पात्र समूचे उपन्यास की रंगभूमि में अग्रभाग में रहते हैं । उपन्यास की लगभग तमाम समस्याएँ और घटनाएँ इन पात्रों के आसपास संगुम्फित होती हैं । व्यंग्यात्मक उपन्यासों में व्यंजित व्यंग्य के वाहक प्राय: ये पात्र होते हैं । "राग दरबारी" के वैद्यजी, रंगनाथ, रामाधीन भिखमखेडवी प्रभृति पात्र, "कुरु कुरु स्वाहा" के मि॰ जोशी और "पहुँचेली", "सबहिं नचावत राम गोसाई" के राधेश्याम जबरसिंह और रामलोचन पाण्डे आदि की गणना प्रमुख पात्रों में होती है । पार्श्वभौमिक पात्रों से उपन्यास में विश्वसनीय सामाजिक सन्दर्भ का निर्माण होता है ।

उपन्यास के प्रमुख पात्र जिस सृष्टि में विहार करते हैं, उस सृष्टि का निर्माण इन छोटे-मोटे पात्रों से होता है । "राग दरबारी" के रुप्पन, बद्री पहलवान, छोटू, सनीचर, लंगड, दूरबीनसिंह डकैत, मालवीय, मि. खन्ना, बेला, गयादीन, जोगनाथ आदि पात्र इस कोटि में आते हैं । "राग दरबारी" के व्यंग्यात्मक परिवेश को उभारने में इन पात्रों का महत्वपूर्ण योगदान है ।

पार्श्वभौमिक पात्रों की एक कोटि है - पत्ता पात्र । ताश के पत्तों पर के चित्रों की भाँति यह अपरिवर्तनशील होते हैं । ये पात्र अपनी बँधी - बँधायी मुद्राओं को लेकर अवतरित होते हैं । उपन्यास में आनेवाले पुलिस पात्र, हॉटल के बेयरे, नौकर-चाकर प्रभृति इस कोटि में आते हैं । ऐसा नहीं कि इन पात्रों का अपना कोई वैशिष्ट्य नहीं होता । यदि उनके ही जीवन पर कोई उपन्यास लिखा जाय, तब उनकी सभी विशेषताएं उभरकर आ सकती हैं । अन्यथा वे अपने एक निश्चित रूप में आते हैं - "राग दरबारी" में ट्रक का ड्राइवर, चाय की दुकानवाली, पुलिस पात्र, छंगामल कॉलिज का प्यून आदि ऐसे ही पात्र हैं ।

यहाँ एक बात उल्लेखनीय है, पात्र चाहे किसी भी कोटि का हो व्यंग्यात्मक उपन्यासों में वे व्यंग्यात्मक तेवरों को लिए रहते हैं । उनके कथोपकथन, व्यवहार आदि सभी में व्यंग्य को उत्पन्न करने की भरपूर क्षमता रहती है ।

चरित्र-सृष्टि की विभिन्न पद्धतियाँ :-

वास्तविक जीवन के पात्र जटिल, अबोध या पेचीदा हो सकते हैं, किन्तु उपन्यास के पात्र पाठक के लिए सुगम्य ही नहीं, प्रत्युत विश्वसनीय भी होने चाहिए। जीवन के पात्रों से हमारा सीधा सम्बन्ध होता है, हम उन्हें उनकी बातों और कार्यों से समझने का यत्न करते हैं। उपन्यास के पात्रों से हमारा परिचय उपन्यासकार के माध्यम से होता है, अत: उनकी सुबोधता स्वाभाविक है।

उपन्यासकार अपनी चरित्र सृष्टि दो प्रकार से करता है :

(1) प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक विधि और

(2) अप्रत्यक्ष या नाटकीय विधि।

प्रत्यक्ष विधि में लेखक स्वयं पात्र के बाह्य एवं आंतरिक व्यक्तित्व को विश्लेषित करता है। बाह्य व्यक्तित्व में उसका आकार - प्रकार, वर्ण, चाल-ढाल, बोली, आदतें, तकिया कलाम इत्यादि को लिया जाता है। वस्तुत: पात्र की जो परिकल्पना लेखक के मस्तिष्क में अवस्थित है, उसे प्रस्तुत करने के लिए इस विधि का उपयोग किया जाता है। आंतरिक व्यक्तित्व में पात्र का भीतरी आपा प्रकाश में आता है। इसमें पात्र के गुण-दोषों को विश्लेषित किया जाता है। अध्याय के आरंभ में व्यक्तिगत विशेषता एवं सामाजिक विशेषता के संदर्भ में इसके कतिपय पक्षों को निर्दिष्ट किया जा चुका है, यहाँ आलोच्य उपन्यासों से कुछ उदाहरणों को लेकर उसे स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है :

:1: "वही लड़की जो कई दिनों से इसी वक़्त सड़क से गुज़रती है । चौड़ी मोहरीवाला डेनिम का ढीला पतलून भी उसके नितम्बों का फैलाव और रानों का मज़बूत मोटापा नहीं छिपा पाता, उसके बाल बहुत छोटे हैं फिर भी वह उन्हें स्कार्फ से बाँधती हैं और इतनी कम उम्र में शायद चटख और इतनी ज्यादा लिपस्टिक पोतती है ।"[25]

:2: "गाँव में एक आदमी रहता था जिसका नाम गयादीन था । वह जोड़-बाकी, गुणा-भाग में बड़ा काबिल माना जाता था क्योंकि उसका पेशा सूदखोरी था । उसकी एक दूकान थी जिस पर कपड़ा बिकता था और रूपये का लेन-देन होता था । उसको एक जवान लड़की थी, जिसका नाम बेला था और एक बहन थी, जो बेवा थी और एक बीवी थी जो मर चुकी थी । बेला स्वस्थ, सुन्दर, गृहकार्य में कुशल और रामायण और माया-मनोहर कहानियाँ पढ़ लेने भर को पढ़ी-लिखी थी । उसके लिए एक सुन्दर और सुयोग्य वर की तलाश थी । बेला तबीयत और जिस्म, दोनों से प्रेम करने लायक थी और रूप्पन बाबू उसको प्रेम करते थे, पर वह यह बात नहीं जानती थी । रूप्पन बाबू रात को सोने से पहले उसके शरीर का ध्यान करते थे और ध्यान को शुद्ध रखने के लिए उस समय वे सिर्फ शरीर को देखते थे, उस पर के कपड़े नहीं । बेला की बुआ गयादीन के घर का काम देखती थी और बेला को दरवाज़े से बाहर नहीं निकलने देती थी । बेला बड़ों की आज्ञा मानती थी और दरवाज़े से बाहर नहीं निकलती थी । उसे बाहर जाना होता तो छत के रास्ते, मिली हुई छतों को पार करती हुई, किसी पड़ोसी के मकान तक पहुँच जाती थी । रूप्पन बाबू, बेला के लिए काफ़ी विकल रहते थे और उसे सप्ताह में तीन-चार पत्र लिखकर उन्हें फाड़ दिया करते थे ।"[26]

:3: सिर्फ मछली की बिक्री से तालेवर ने पैसा नहीं जमा किया है । तालेवर गोढ़ी अपने ज़माने का बहुत मशहूर । "ओजा गुणी" था । भूत-प्रेत, जिन-पिशाच, देव-दानव किसी की भी हवा लग जाय - तालेवर गोढ़ी के हाथ की एक चुटकी धूल पड़ते ही बाप-बाप करके भूत भागते थे । खुद्दी खरैइहा में एक साथ चार डाइनों को नंगा नचाया था - तालेवर गोढ़ी ने । मरे हुए लड़कों को जिलाने के बाद चारों डाइनों का "गुण" खींचकर अपनी चुनौटी में रख लिया था । मशान की हड्डी जिस के घर में गाड दे उसके घर में ऐसा "बनरभूता" लग जाता था कि एक ही साल में हहाकर साफ़ ।"[27]

:4: "नेताजी किसी भी दल के नेता नहीं है । नेता - बिरादरी में उठना बैठना उन्हें पसन्द है, इसीलिए दोस्तों ने उन्हें यह नाम दे डाला है । लिबास भी उनका यूथ-लीडरवाला है - खादी की गंजी (जिसमें नोटो की गड्डी रखने के लिए गहरी जेब हो), खादी का कुर्ता, पैण्ट, जवाहर जाकेट और कोल्हापुरी चप्पल । गाँधी टोपी नहीं पहनते कि "ऊ सब ठकोसला अब चलता नहीं ।"[28]

:5: दामोदरप्रसाद के पिता दारोगा थे और मामा कोतवाल । माता और पिता के वंश ने, पुलिस विभाग की कुटिलता का पाठ बड़े यत्न से पढ़ा था । xxx रिश्वत लेने में उसने अब अपने पेशे की दक्षता प्राप्त कर ली थी । जया जब कभी मायके जाती, वह एक साथ कई नयी नियुक्तियाँ कर लेता । बरतन मलनेवाली, महाराजिन, जमादारनी सब बँगले में पटरानियों-सी स्वेच्छाचारिणी बनी घूमती रहीत । दुराचारी स्वामी की आड़ में हरामखोर नौकर-चाकर भी मनमाना शिकार खेलने लगते । वैसे तो उन

पहाड़ी इलाकों में नियुक्ति होने पर हर सरकारी अफ़सर श्रवणकुमार बना, अपने माता=पिता को सरकारी जीप में बद्रीनाथ - केदारनाथ की यात्रा करा ही लेता था, पर दामोदरप्रसाद की जीप इधर पेशेवर ट्रीप भी लगाने लगी थी । xxx कुछ ही दिन पूर्व वह अपने अफ़सर के माता-पिता, सास-ससुर सबको बद्रीनाथ-केदारनाथ घुमा ही नहीं लाया, उनके साथ प्रचुर मात्रा में शुद्ध धूप, शहद और आठ ऐसे मोटे मोटे पहाडी थुल्मे पहुँचा आया था, जिन्हें ओढ़कर साहब का पूरा परिवार कम से कम अठ्ठाइस जाड़े काट सकता था । xxx वह जानता था कि प्रभु को प्रसन्न करने से पहले अब उनकी सास को प्रसन्न करना अधिक फलदायी है । उसकी पिछली पदोन्नति के लिए भी, उसे डी•आई•जी• की सास ने ही आर्शीवाद दिया था । जब कहीं बासमती का एक दाना भी ढूँढ़े नहीं मिल रहा था, तब हनुमान की ही भाँति उड़ता पूरा पर्वत ही हथेली पर घर लाया था ।"[29]

प्रथम अवतरण में जूली नामक एक लड़की के बाहरी आपा का चित्रण हैं । दूसरे में गयादीन, बेला और रुप्पन तीन चरित्रों की विशेषताओं को लेखक ने व्यंग्यात्मक ढंग से उकेरा हैं । तीसरे में तालेवर गोढ़ी नामक एक तांत्रिक का चित्र है । चौथे में हमारी युवा-नेता पाँख पर कटाक्ष हैं। पाँचवे में एक भ्रष्ट पुलिस अफ़सर का व्यंग्यपूर्ण चित्र उपस्थित हुआ है । इन सभी उदाहरणों में चरित्रांकन की प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग हुआ है । व्यंग्योन्मुखी उपन्यासों में व्यंग्यात्मक मुद्राओं को उकेरने में यह पद्धति बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है ।

जहाँ व्यंग्यात्मक स्थिति नहीं होती, वहाँ इस विश्लेषणात्मक चरित्रांकन की शैली भिन्न स्तर लिए हुए रहती है । यहाँ एक उदाहरण

द्रष्टव्य है : - "विन्ध्याचल के लाल पठार का प्रशस्त धीरज, पथरीली धरती का स्थैर्य, दुर्द्धर्ष चट्टानों का प्रति ध्वनित विद्रोही स्वर, सनसनाते जंगलों का उद्दाम संगीत, बीहड़ मैदानों का बलिदानी अस्वीकार, मालवा और काली मिट्टी का सलोनापन, चंचल, बलखाता नीर भरी नदियों का मिठास; निमाड़ के खेतों की ताज़गी; अवन्ती, दशपुर, विदिशा महिष्मती, धार और मांडव की ऐतिहासिकता; पाताल पानी की गहराई और संग मरमर के पहाडों से धारा धार झरती नर्मदा की निर्मलता - यदि यह सब एक साथ मिलकर देह धारण कर ले तो एक अनूठे व्यक्तित्व की रूपरेखा बन जाएगी । और वह व्यक्तित्व होगा माखनलालजी का ।"[30]

तात्पर्य यह कि इस पद्धति का उपयोग प्रत्येक साहित्यिक विधा एवं प्रत्येक औपन्यासिक प्रकार के अंतर्गत किया जाता है, किन्तु उपन्यास यदि व्यंग्यात्मक हो तो उसकी शैली में व्यंग्यात्मक गुणात्मकता स्वयमेव आ जाती है ।

अप्रत्यक्ष या नाटकीय चरित्रांकन पद्धति अधिक सूक्ष्म होती है । उसमें चरित्र की सृष्टि पात्रों के कथोपकथन एवं कार्यों द्वारा अनुमानित होती है । जब कोई भी पात्र बात करता है, तो उसकी भाषा एवं विचारों से उसका चरित्र भी प्रकाश में आता है । आर्थर पोलार्ड महोदय के मतानुसार पात्र में व्यंग्यात्मक अर्थ संक्रमित करने के चार तरीके होते हैं;

(1) वह क्या करता है या क्या नहीं कर सकता,

(2) दूसरे पात्र उसके प्रति कैसा व्यवहार करते हैं या दूसरे पात्र उसके विषय में क्या कहते हैं,

(3) वह स्वयं अपने बारे में क्या कहता है और

(4) लेखक उस पात्र के बारे में क्या कहता है ।

इनमें अंतिम को छोड़कर शेष तीनों से नाटकीय चरित्रांकन में सहायता मिलती है ।[3]

एक-दो उदाहरण द्रष्टव्य हैं :-

:1: "सउदा करो ता इसी फटीयर हिन्दी साहित्ते से आपका उद्धार करा दें कक्का ।"

"कक्का से सोदा ।"

"सउदे के बिना सीरसली कोई लेता नहीं ससुर ।" नेताजी ने कहा, पीक गिरने को थी, उसे रूमाल से सम्हालते हुए नेताजी गुलाब के गमले का कल्याण कर आये । बोले, "इस किताब को आप खुदे छापो । जो भी लागत आवे उससे पचगुना रखा दाम । हम समझते हैं कि दस रूपयूया आयेगी एइसी किताब की लागत, पचास रकखा क़ीमत समझे । पचपन पस-सण्ट कमीसन पर हमको देइ दो अउर छुट्टी । चार हजार के निकाला संस्करन, भतीजा बिकवा देई, बमोचनो करा देई मुखमन्त्री से किसी । फोटू - खबर ऊ सब सेंत में । भतीजा का बनि हैं एक लाख दस हजार । ओ में से 50 हजार इहाँ-उहाँ दान-दक्खिना में देइके पड़ी । बाकी साठ हजार उसकी दउड - धूप, चा-पानी के । कक्का के कुछो घसीट मारने के नब्बे हजार बनि हैं ओ में से चालीस से कुछ कम जइ हैं कागजवाले को, प्रेस को, बाकी पचास रहि है घर मा ।"[31]

:2: "गुरूजी, कुछ अकिल तो हमारी भी थी । बल्कि सच पूछो तो असली अकिल हमारी ही थी । उसके बाद जब गाड़ी लीक पर आ गया तो उसे चलाया कालिकाप्रसाद ने । पर आपके दरबार में बैठते-बैठते कुछ हमें भी

तीन-तेरह का इल्म हो गया है । कहावत है कि अखाड़े का लतमरुआ भी पहलवान हो जाता है, जैसे बद्री भैया के अखाडे में छोटे पहलवान हो गये, वैसे ही कुछ विद्या हमें भी आ गयी है । xxx तो हमें पता चला कि आजकल सहकारिता का जोर है । ब्लाक से एक ए॰डी॰ओ॰ आकर बोले कि अपने खेत को अपना न कहो, सभी के खेतों को अपना कहो और अपने खेत को सभी का खेत कहो । तभी होगी सरकारी खेती और धाँसकर पैदा होग अन्न । हमनेक कहा कि तरकीब चौकस है और अगर हम प्रधान हो गये, तो सब खेत सरकार को दे देंगे सहकारी खेती के लिए । ए॰डी॰ओ॰ बोले कि सरकार क्या करेगी तुम्हारा खेत लेकर ? खेत भी कोई कल--कारखाना है ? खेत तुम्हारा ही रहेगा । खेती तुम्हीं करोगे । जरा-सा कागज़ का पेट भर देने से खेती सरकारी हो जायगी । गाँव में कुआपरेटिव फ़ारम खुल जायगा । सब मामलों में शिवपाल गंज आगे है, इस मामले में भी आगे रहेगा । xxx हमने भी ए॰डी॰ओ॰ से कहा कि ए॰डी॰ओ॰ साहब, शिवपाल गंज को आपने समझा क्या है ? हमारा पेशब किसी के मुकाबले पतला नहीं होता । xxx वहीं हमने ए॰डी॰ओ॰ साहब से फुसलाकर पूछा कि मामला सूखा है कि तर । उसने कबूल किया ।"[32]

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम में आजकल के चलता-पुर्जा, हर-फन-मौला, तिकड़मबाज, भ्रष्ट नेतानुमा व्यक्ति का चरित्र बखुबी उभर आया है । इसमें प्रकारान्तर से साहित्य-क्षेत्र में चलनेवाली धाँधली का भी कुछ संकेत मिल जाता है । दूसरे उदाहरण में सनीचर के रूप में ऐसे लोगों का चरित्र व्यंजित हुआ है जो सरकार की हर योजना को, हर स्कीम को अपने व्यक्तिगत फायदे के अनुसार मोड़ देते हैं । योजना की मूल भावना एक

तरफ़ रह जाती है और उसका लाभ कुछ गिने-चुने लोग उठा जाते हैं ।

कई बार पात्रों के कथोपकथनों से उनका चरित्र तो उजागर होता है, कुछ दूसरे चरित्रों पर भी प्रकाश पड़ता है । जैसे --

"गुरू महराज, ये जिसका नाम कालिकाप्रसाद हैं, यह भी एक हरामी है । xxx हाकिमों से काम निकालने के लिए आदमी की शक्ल बिलकुल इसी की जैसी होनी चाहिए । जब ज़रुरत होती है तो यह बड़े बड़े लच्छन झाडता है, कान-पूँछ फटकारकर मुँह से बारुद - जैसी निकालने लगता है । एक-एक साँस में पाँच - पाँच सात - सात ए॰मे॰ले॰ लोगों के नाम बोल जाता है और हाकिम बेचारे का मुँह खुलाका-खुला रह जाता है । उस वक्त कोई कालिकाप्रसाद की लगाम पर हाथ लगा दे तो जानूँ । x x x वही कालिकाप्रसाद अगर किसी अकड़ू हाकिम के सामने पड़ जाय, तो पहले से ही केंचुए की तरह टेढ़ा-मेढ़ा होने लगता है । क्या बतावें महराज, आँख नीची करके ऐसा भूदानी नमस्कार करता है कि हाकिम सोचता ही रह जाय कि यह कौन है - विकास भाई कि प्रकास भाई । अकिल से इतना हुशियार है, पर भुग्गा - जैसा बनकर खड़ा हो जाता है और तब क्या मजाल कि कोई इसे ताड़ ले । बड़ा - से - बड़ा काबिल आदमी इसको बेवकूफ मानकर आगे निकल जाता है और तब यह पीछे से झपटकर हमला करता है ।"[33]

यहाँ सनीचर के इस कथन में रंगे - सियार - सा, अवसरवादी, खुशामदखोर, काँइयापन और हरामीपन में अव्वल ऐसे कालिकाप्रसाद का चरित्र उद्घाटित हुआ है ।

कई बार एकाधिक पात्रों के संवादों में अलग - अलग लोगों का चरित्र उभर आता है । "राग दरबारी" के छोटू पहलवान ने अपने पिता कुसहरप्रसाद को मारा है । इस प्रसंग को लेकर जो "कुकरहाव"[34] मचा है, उस संदर्भ में कुछ पात्रों का वार्तालाप नीचे दिया जा रहा है :-

"रंगनाथ ने छोटे को हिकारत के साथ देखकर कहा, "यह बात बेजा हुई पहलवान ।" छोटे ने रंगनाथ को यों देखा जैसे उनकी निगाह के सामने कोई भुनगा उड़ रहा हो । उखड़ी हुई आवाज में जवाब दिया, "यह बात है तो मैं जाता हूँ । मैं तो बद्री गुरु का घर समझकर आया हूँ । अब तुम्हीं लोगों की हुकूमत है, तो यहाँ पेशाब करने भी नहीं आऊँगा ।" रंगनाथ ने हँसकर बात को हल्का करना चाहा । कहा, "नहीं, नहीं, बैठो पहलवान । दिमाग गरम हो रहा हो तो एक लोटा ठंडा पानी पी लो ।" फिर उसी तरह उखड़ी आवाज में छोटे ने कहा, "पानी मैं यहाँ टट्टी तक के लिए पानी नहीं लूँगा । सब लोग मिलकर चले हैं हमको लुलुहाने ।" बद्रीने अब छोटे की ओर बड़प्पन की निगाह से देखा और एक मुगदर को बायें हाथ से तौला । देखते-देखते मुसकराये । बोले, "गुस्सा तो कमज़ोर का काम है । तुम क्यों ऐंठ रहे हो । आदमी हो कि पायजामा । " छोटे पहलवान समझ गये कि उस कोने से उन्हें सहारा मिल रहा है । अकड़ दिखाते हुए बोले, "मुझे अच्छा नहीं लगता बद्री गुरु । सभी दमड़ी जैसी जान लिये हुए मुझे लुलुहाते घूम रहे हैं । कहते हैं, बाप को क्यों मारा । बाप को क्यों मारा ।। लगता है कि कुसहरप्रसाद शिवपाल गंज में सबके बाप ही लगते हैं । जैसे मैं ही उनका एक दुश्मन हूँ ।"

"अबे, तो अपने बाप को कहीं इस तरह मारा जाता है ?" छोटे पहलवान और भी उखड़ गये । बोले, "गुरु, साला बाप, जैसा बाप हो तब तो एक बात भी है ।" थोड़ी देर सब चुप रहे । रंगनाथ छोटे पहलवान की चढ़ी हुई भौंहों को देखता रहा । सनीचर भी अब तक बैठक में आ गया था । समझाते हुए बोला, "ऐसी बात मुँह से न निकालनी चाहिए । धरती-धरती चलो । आसमान की छाती न फाड़ो । आखिर कुसहरने तुम्हें पैदा किया है, पाला-पोसा है ।" छोटे ने भुनभुनाकर कहा, "कोई हमने इस्टाम्प लगाकर दरखास्त दी थी कि हमें पैदा करो । चले साले कहीं के पैदा करनेवाले ।" बद्री चुपचाप यह वार्तालाप सुन रहे थे । अब बोले, "बहुत हो गया छोटे । अब ठण्डे हो जाओ ।" छोटे अनमने होकर बैठे रहे । नीम के पेड़ पर होनेवाली तोतों की "टें-टें" सुनते रहे । आखिर में एक साँस खींच कर बोले, "तुम भी मुझी को दबाते हो गुरु" तुम जानते नहीं, यह बुड्ढा बड़ा कुलच्छनी है । इसके मारे कहारिन ने घर में पानी भरना बन्द कर दिया है । और भी बताऊँ ? अब क्या बताऊँ ? कहते जीभ गंधाती है ।"[35]

उपर्युक्त वार्तालाप से रंगनाथ, छोटू पहलवान, बद्री पहलवान, सनीचर कुसहरप्रसाद आदि सभी पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है ।

पात्रों के कार्य-कलापों द्वारा भी उनका चरित्र सामने आता है । यह कार्य-कलाप समूचे उपन्यास में फैले रहते हैं । वस्तुत: कर्महीी मनुष्य की सही परख है । पात्र के द्वारा जो कार्य संपादित होते हैं, उन्हीं से उस के चरित्र का निर्माण होता है । व्यंग्यात्मक उपन्यासों में प्राय: पात्रो के कथन-कवन में अंतर्विरोध पाया जाता है ।

अंग्रेजी में कहा गया है --

'Man is known by the company he keeps.'

मनुष्य अपने मित्रों से भी पहचाना जाता है । उपन्यास के पात्र किन-किन से उठते-बैठते हैं, किन-किन के साथ उनका नैकट्य है उससे भी उनके चरित्र पर प्रकाश पड़ता है । "सूखता हुआ तालाब" के देवप्रकाश सुशिक्षित संस्कारी एवं सात्विक प्रकृति के आदमी हैं, तो शंकर और जैराम जैसे नैतिक मूल्यों में विश्वास करने वाले कुछ लोगों से उनके अच्छे सम्बन्ध हैं । दूसरी तरफ शिवलाल, शामदेव, मास्तर धर्मेन्द्र और कामरेड मोतीलाल की चण्डाल - चौकड़ी है ।

यहाँ पर एक तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करना समुचित होगा कि पात्र के व्यंग्यात्मक चित्रांकन में इस बात का सदैव ध्यान रहना चाहिए कि उसे व्यंग्यात्मक बनाते - बनाते कहीं वह अवास्तविक - अविश्वसनीय उपहासास्पद न हो जाय । यदि ऐसा हुआ तो लेखक लक्ष्य चूक जायेगा । पाठक इस अतिरंजना से इस अनुमान पर पहुँचे कि ऐसा पात्र यथार्थ जीवन में नहीं हो सकता, लेखक ने उसे व्यंग्यात्मक बनाने के लिए ही ऐसा चित्रित किया हैं,तो व्यंग्य का प्रभाव एवं प्रयोजन ही नष्ट हो जायेंगे । व्यंग्यकार को इस भयस्थान से बचना होगा । उसे साहित्य और जीवन में समतुला बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहना पड़ता है । यदि यहाँ वह चूक जाता है तो वांछित व्यंग्यात्मक चोट को संक्रमित करने में वह असफल सिद्ध होगा ।[37] अवास्तविक ट्रेजडी जैसे प्रबुद्ध पाठक

में करुणा का संचार नहीं कर सकती, वैसे ही अवास्तविक व्यंग्य भी बे-असर रहेगा ।

निष्कर्ष

अध्याय के समग्रालोचन से निम्नलिखित कुछ तथ्यों को निर्दिष्ट किया जा सकता है :-

:1: व्यंग्यात्मक चरित्रों की सृष्टि उपन्यासकार साम्प्रतिक जीवन की विषमता एवं विसंगतिपूर्ण स्थितियों के बीच में करता है ।

:2: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में जैसे उपन्यासकार का लक्ष्य मनोवैज्ञानिक स्थितियों का विश्लेषण है, उसी प्रकार व्यंग्यात्मक उपन्यासों में उसका लक्ष्य व्यंग्यात्मक स्थितियों का चित्रण है और अतः तदानुकूल चरित्रों का वह चयन करता है ।

:3: पात्र किसी भी वर्ग या कोटि का हो, व्यंग्यात्मक उपन्यासों में उसका गठन व्यंग्यात्मक मुद्राओं को लेकर होता है ।

:4: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की तुलना में व्यंग्यात्मक उपन्यासों का लेखक अधिक मुखर होता है । वह प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक विधि का भी भरपूर प्रयोग करता है ।

:5: पात्र व्यंग्यात्मक होते हुए भी अवास्तविक नहीं लगना चाहिए, अन्यथा व्यंग्य का प्रभाव नष्ट हो सकता है ।

संदर्भ

1 "राग दरबारी" : पृ॰ 64-65 ।

2 वही : पृ॰ 10 ।

3 वही : पृ॰ 23 ।

4 वही : पृ॰ 23 ।

5 वही : पृ॰ 39 ।

6 वही : पृ॰ 38-39 ।

7 वही : पृ॰ 31 ।

8 वही : पृ॰ 30 ।

9 "नेताजी कहिन" : पृ॰ 65 ।

10 "कुरु कुरु स्वाहा" : पृ॰ 26 ।

11 वही : पृ॰ 38 ।

12 वही : पृ॰ 38 ।

13 वही : पृ॰ 38 ।

14 "राग दरबारी" : पृ॰ 27 ।

15 वही : पृ॰ 111 ।

16 वही : पृ॰ 41-42 ।

17 "सबहि नचावत राम गोसाई" : पृ॰ 131 ।

18 वही : पृ॰ 131 ।

19 तुलनीय :

पन्द्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस मध्यबिन्दु है हमारी
आज़ादी के इतिहासका-
जहाँ से पल्टना सीखा,
जहाँसे उलटना सीखा,
जहाँ से मुड़ना सीखा सिद्धान्तों से सिद्धान्तों की खोल को ओढ़कर ।

"बिजली के फूल" : डॉ॰ पारूकांत देसाई : पृ॰ 54 ।

20 "जुलूस" : पृ॰ 36 ।

21 तुलनीय : "Every great character of fiction exhibit, therefore an intimate combination of the typical and individuaal traits. It is through being typical the character is true; it is through being individual that the character is convincing."

22 देखिए : "कुरु कुरु स्वाहा" लेखकीय वक्तव्य ।

23 वही : पृ॰ 200 ।

24 वही : पृ॰ 198 ।

25 "सीमाएँ टूटती हैं" : पृ॰ 166 ।

26 "राग दरबारी" : पृ॰ 124 ।

27 जुलूस : पृ॰ 38 ।

28 "नेताजी कहिन" : पृ॰ 9 ।

29 "कृष्णा कली" : पृ॰ 90-91 ।

30 उभरी गहरी रेखाएँ : सं॰ कैलासचन्द्र भाटिया : "सूरज से बेदाग " माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्व पर एक भाव चित्र : गिरिजाकुमार माथुर : पृ॰ 21 ।

31 "We have at least four ways by which the satiric meaning may emerge, namely, by what a man does (or fails to do), by what others do to and say of him, by what he says of himself and, in the novel, by what the author says of him."
: The "Critical Idiom : Satire" : P. 24 ।

32 "नेताजी कहिन" : पृ॰ 57 ।

33 "राग दरबारी" : पृ॰ 195 ।

34 वही : पृ॰ 194 ।

35 देखिए : " "कुकरढाव" गंज ही बोली का शब्द है । कुत्ते आपस में लड़ते हैं और एक-दूसरे को बढ़ावा देने के लिए शोर मचाते हैं । उसी को कुकरढाव कहते हैं ।"
"राग दरबारी" : पृ.119 ।

36 वही : पृ. 122-123 ।

37 "He is constantly required to maintain a fine balance between literature and life. When he fails, he can so easily decline into the mere preacher or moralist." : The Critical Idiom : Satire" P. 26.

. . . . .